गेहूँ और गुलाब

गेहूँ हम खाते हैं, गुलाब सूँघते है। एक से शरीर के पुष्टि होती है, दूसरे से हमारा मानस तृप्त होता है।

गेहूँ बड़ा या गुलाब ? हम क्या चाहते हैं – पुष्ट शरीर या तृप्त मानस ? या पुष्ट शरीर पर तृप्त मानस।

जब मानव पृथ्वी पर आया, भूख लेकर। क्षुधा, क्षुधा, पिपासा, पिपासा। क्या खाए क्या पीए ? माँ के स्तनों को निचोड़ा, वृक्षों को झकझोरा, कीट–पतंग, पशु–पक्षी कुछ न छूट पाए उससे।

गेहूँ – उसकी भूख का काफला आज गेहूँ पर टूट पड़ा है। गेहूँ उपजाओ, गेहूँ उपजाओ, गेहूँ उपजाओ,

मैदान जोते जा रहे हैं, बाग उजाड़े जा रहे हैं – गेहूँ के लिए। बेचारा गुलाब–भरी जवानी में कहीं सिसकियाँ ले रहा है। शरीर की आवश्यकता ने मानसिक कृतियों को कहीं कोने में डाल रखा है, दबा रखा है।

किन्तु चाहे कच्चा चरे या पकाकर खाए–गेहूँ तक पशु और मानव में क्या अन्तर ? मानव को मानव बनाया गुलाब ने। मानव, मानव तब बना, जब उसने शरीर की आवश्यकताओं पर मानसिक वृत्तियों को तरजीह दी।

यही नहीं, जब उसके पेट में भूख खाँव–खाँव कर रही थी , तब भी उसकी आँखें गुलाब पर टँगी थीं।

उसका प्रथम गीत निकला, जब उसकी कामिनियाँ गेहूँ को ऊखल और चक्की में कूट–पीस रही थीं। पशुओं को मारकर, खाकर ही वह तृप्त नहीं हुआ, उनकी खाल का बनाया ढोल और उनके सींग की बनाई तुरही। मछली मारने के लिए जब वह अपनी नाव में पतवार का पंख लगाकर जल पर उड़ा जा रहा था, तब उसकी छप–छप में उसने ताल पाए, तराने छेड़े। बाँस से उसने लाठी ही नहीं बनाई, बंशी भी बजाई।

रात का काला–धुप्प पर्दा दूर हुआ, तब वह उच्छवसित हुआ सिर्फ इसलिए नहीं कि अब पेट–पूजा की समिधा जुटाने में उसे सहूलियत मिलेगी, बल्कि वह आनन्द–विभोर हुआ ऊषा की लालिमा से, उगते सूरज की शनैः–शनैः प्रस्फुटित होने वाली सुनहरी किरणों से, पृथ्वी पर चमचम करते लक्ष–लक्ष ओस–कणों से। आसमान में जब बादल उमड़े तब उनमें अपनी कृषि का आरोप करके ही वह प्रसन्न नहीं हुआ, उसके सौन्दर्य बोध ने उसके मन–मोर को नाच उठने के लिए लाचार किया। इन्द्रधनुष ने उसके हृदय को भी इन्द्रधनुषी रंगों में रंग दिया।

मानव–शरीर में पेट का स्थान नीचे है, हृदय का ऊपर और मस्तिष्क का सबसे ऊपर! पशुओं की तरह उसका पेट और मानस समानान्तर रेखा में नहीं है। जिस दिन वह सीधे तनकर खड़ा हुआ, मानस ने उसके पेट पर विजय की घोषणा की।

गेहूँ की आवश्यकता उसे है, किन्तु उसकी चेष्टा रही है गेहूँ पर विजय प्राप्त करने की। प्राचीन काल के उपवास, व्रत, तपस्या आदि उसी चेष्टा के भिन्न–भिन्न रूप रहे हैं।

जब तक मानव के जीवन में गेहूँ और गुलाब का संतुलन रहा, वह सुखी रहा, सानन्द रहा।

वह कमाता हुआ गाता था और गाता हुआ कमाता था। उसके श्रम के साथ संगीत बँधा हुआ था और संगीत के साथ श्रम।

उसका साँवला दिन में गायें चराता था, रात में रास रचाता था।

पृथ्वी पर चलता हुआ, वह आकाश को नहीं भूला था और जब आकाश पर उसकी नजरें पड़ी थीं, उसे याद था कि उसके पैर मिट्टी पर हैं।

किन्तु प्रतीक बन गया हड्डी तोड़ने वाले, थकाने वाले, उबाने वाले, नारकीय यन्त्रणाएँ देने वाले श्रम का–उस श्रम का, जो पेट की क्षुधा भी अच्छी तरह शांत न कर सके ।

और गुलाब बन गया प्रतीक विलासिता का – भ्रष्टाचार का, गन्दगी और गलीज का ! वह विलासिता – जो शरीर को नष्ट करती है और मानस को भी।

अब उसके साँवले ने हाथ में शंख और चक्र लिए। नतीजा – महाभारत और निजवंश का सर्वनाश।

वह परम्परा चली आ रही है। आज चारों ओर महाभारत है, गृह-युद्ध है-सर्वनाश है, महानाश है।

गेहूँ सिर धुन रहा है खेतों में, गुलाब रो रहा है बगीचों में – दोनों अपने-अपने पालन-कर्ताओं के भाग्य पर, दुर्भाग्य पर-?

चलो, पीछे मुड़ो ! गेहूँ और गुलाब में हम फिर एक बार संतुलन स्थापित करें ?

किन्तु मानव क्या पीछे मुड़ा है, मुड़ सकता है ?

यह महायात्री आगे बढ़ता रहा है, आगे बढ़ता रहेगा।

और, क्या नवीन संतुलन चिरस्थाई हो सकेगा ? क्या इतिहास फिर दुहराकर नहीं रहेगा ?

नहीं, मानव को पीछे मोड़ने की चेष्टा न करो।

अब गुलाब और गेहूँ में फिर सन्तुलन आने की चेष्टा में सिर खपाने की आवश्यकता नहीं।

अब गुलाब गेहूँ पर विजय प्राप्त करे।

गेहूँ पर गुलाब की विजय – चिर-विजय । अब नए मानव की यह नई आकांक्षा हो!

क्या यह संभव है ?

बिल्कुल, सोलह आने संभव है।

विज्ञान ने बता दिया है – यह गेहूँ क्या है? और उसने यह भी जता दिया है कि मानव में यह चिर-बुभुक्षा क्यों है।

गेहूँ का गेहुँत्व क्या है, हम जान गए हैं। यह गेहुँत्व उसमें आता कहाँ से हैं, हमसे यह भी छिपा नहीं है।

पृथ्वी और आकाश के कुछ तत्व एक विशेष प्रक्रिया से पौधों की बालियों में संगृहीत होकर गेहूँ बन जाते हैं। उन्हीं तत्वों की कमी, हमारे शरीर में, भूख नाम पाती है!

क्यों पृथ्वी की जुताई, कुड़ाई, गुड़ाई ? क्यों आकाश की दुहाई ? हम पृथ्वी और आकाश से उन तत्वों को सीधे क्यों नहीं ग्रहण करें ?

यह तो अनहोनी बात-यूटोपिया, यूटोपिया !

हाँ, यह अनहोनी बात, यूटोपिया तब तक बनी रहेगी, जब तक विज्ञान संहार-काण्ड के लिए ही आकाश-पाताल एक करता रहेगा। ज्योंही उसने जीवन की समस्याओं पर ध्यान दिया, यह हस्तामलकवत् सिद्ध होकर रहेगी।

और, विज्ञान को इस ओर आना है, नहीं तो मानव का क्या, सारे ब्रह्माण्ड का संहार निश्चित है।

विज्ञान धीरे-धीरे इस ओर कदम बढ़ा भी रहा है।

कम-से-कम इतना तो वह तुरंत कर ही देगा कि गेहूँ इतना पैदा हो कि जीवन की अन्य परमावश्यक वस्तुएँ-हवा, पानी की तरह इफरात हो जाएँ। बीज, खाद, सिंचाई, जुताई के ऐसे तरीके निकलते ही जा रहे हैं, जो गेहूँ की समस्या को हल कर दें।

प्रचुरता – शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाले साधनों की प्रचुरता-की ओर आज का मानव प्रभावित हो रहा है।

प्रचुरता ? – एक प्रश्न चिह्न।

क्या प्रचुरता मानव को सुख और शान्ति दे सकती है ?

'हमारा सोने का हिन्दुस्तान' – यह गीत गाइए, किन्तु यह न भूलिए कि यहाँ एक सोने की नगरी थी, जिसमें राक्षसता वास करती थी। राक्षसता–जो रक्त पीती थी, अभक्ष्य खाती थी, जिसके अकाय शरीर थे, दस सिर थे, जो छह महीने सोती थी, जिसे दूसरे की बहू–बेटियों को उड़ा ले जाने में तनिक भी झिझक नहीं थी।

गेहूँ बड़ा प्रबल है – वह बहुत दिनों तक हमें शरीर का गुलाम बनाकर रखना चाहेगा। पेट की क्षुधा शांत कीजिए, तो वह वासनाओं की क्षुधा जागृत कर आपको बहुत दिनों तक तबाह करना चाहेगा।

तो, प्रचुरता में भी राक्षसता न आवे, इसके लिए क्या उपाय ?

अपनी वृत्तियों को वश में करने के लिए आज का मनोविज्ञान दो उपाय बताता है – इंद्रियो के संयमन का; और वृत्तियों के उन्नयन का।

आज देखिए! गांधी जी के तीस वर्ष के उपदेशों और आदेशों पर चलने वाले हम तपस्वी किस तरह दिन–दिन नीचे गिरते जा रहें हैं।

इसलिए उपाय एकमात्र है – वृत्तियों के उन्नयन का।

कामनाओं को स्थूल वासनाओं के क्षेत्र से ऊपर उठाकर सूक्ष्म भावनाओं की ओर प्रवृत्त कीजिए।

शरीर पर मानस की पूर्ण प्रभुता स्थापित हो–गेहूँ पर गुलाब की!

गेहूँ के बाद गुलाब – बीच में कोई दूसरा टिकाव नहीं, ठहराव नहीं।

गेहूँ की दुनिया खत्म होने जा रही है– वह स्थूल दुनिया, जो आर्थिक और राजनीतिक रूप से हम सब पर छाई हुई है!

जो आर्थिक रूप में रक्त पीती रही है, राजनीतिक रूप में रक्त की धारा बहाती रही है!

अब वह दुनिया आने वाली है, जिसे हम गुलाब की दुनिया कहेंगे!

गुलाब की दुनिया – मानव का संसार – सांस्कृतिक जगत्।

अहा, कैसा वह शुभ दिन होगा,जब हम स्थूल शारीरिक आवश्यकताओं की जंजीर तोड़कर सूक्ष्म मानव–जगत् का नया लोक बसाएँगे!

जब गेहूँ से हमारा पिण्ड छूट जाएगा और हम गुलाब की दुनिया में स्वच्छंद विहार करेंगे!

गुलाब की दुनिया – रंगों की दुनिया, सुगंधों की दुनिया!

भौंरे नाच रहे, गूँज रहे, फुलसुँघनी फुदक रही, चहक रही!

नृत्य, गीत – आनंद, उछाहे!

कहीं गंदगी नहीं, कहीं कुरूपता नहीं ! आँगन में गुलाब, खेतों में गुलाब! गालों पर गुलाब खिल रहे, आँखों से गुलाब झाँक रहा।

जब सारा मानव–जीवन रंगमय, सुगंधमय, नृत्यमय, गीतमय बन जाएगा। वह दिन कब आएगा ?

वह आ रहा है – क्या आप देख नहीं रहे ? कैसी आँखें है आपकी ! शायद उन पर गेहूँ का मोटा पर्दा पड़ा हुआ है। पर्दे को हटाइए और देखिए वह अलौकिक, स्वर्गिक दृश्य इसी लोक में, अपनी इस मिट्टी की पृथ्वी पर ही !

''शौके दीदार अगर है, तो नजर पैदा कर!''

अभ्यास

बोध प्रश्न -

अति लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. पृथ्वी पर मानव अपने साथ क्या लेकर आया है ?
2. मानव को मानव किसने बनाया ?
3. मानव-जीवन सुखी और आनन्दित कब होता है ?
4. गुलाब किसका प्रतीक बन गया है ?
5. आज का मानव किस परम्परा से प्रभावित है ?
6. कामनाओं को स्थूल वासनाओं के क्षेत्र से ऊपर उठकर हमारी प्रवृत्ति किस ओर होनी चाहिए ?

लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. गेहूँ और गुलाब से मानव को क्या प्राप्त होता है ?
2. मनुष्य पशु से किस प्रकार भिन्न है ?
3. विज्ञान ने गेहूँ के बारे में क्या बतलाया है ?
4. गेहूँ और मानव शरीर का क्या सम्बन्ध है ?
5. वृत्तियों को वश में करने के लिए मनोविज्ञान ने कौन से उपाय बतलाए हैं ?
6. लेखक के अनुसार शुभ दिन का स्वरूप कैसा होगा ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

1. 'गेहूँ और गुलाब' में लेखक संतुलन क्यों स्थापित करना चाहते हैं ?
2. वृत्तियों के उन्नयन का क्या आशय है ? स्पष्ट कीजिए।
3. 'उसके श्रम के साथ संगीत बँधा हुआ था और संगीत के साथ श्रम' इस पंक्ति का भाव-विस्तार कीजिए।
4. निम्नलिखित अंश की सप्रसंग व्याख्या कीजिए -
   ''मानव शरीर में पेट का स्थान नीचे है, हृदय का ऊपर और मस्तिष्क का सबसे ऊपर। पशुओं की तरह उसका पेट और मानस समानान्तर रेखा में नहीं है।''
5. रामवृक्ष बेनीपुरी का भाषा - शैली पर अपने विचार लिखिए ।

भाषा अध्ययन -

1. पाठ में आए हुए इन सामासिक शब्दों का विग्रह कर समास का नाम लिखिए-
   सौंदर्यबोध, मन-मोर, गृह-युद्ध, कीट-पतंग, इन्द्रधनुष
2. दिए गए शब्दों से वाक्य बनाइए - कच्चा, शारीरिक, मानसिक, भ्रष्टाचार

ध्यान से पढ़िए -

शुभम् के बड़े भाई अशोक राजनगर में रहते हैं।[1] शुभम् उनसे मिलने राजनगर गया। अचानक शुभम् को देखकर अशोक ने कहा- अरे! शुभम् तुम!![2] शुभम् ने बताया कि आपसे मिलने का मन हुआ तो चला आया। अशोक ने पूछा- क्या तुम आज ही वापस जाओगे?[3] शुभम ने उत्तर दिया-मैं आज नहीं जाऊँगा[4] अशोक ने कहा- ठीक है। शायद आज मैं देर से लौटूँ ।[5] तुम बाजार चले जाओ।[6] लो ये पैसे, माया के लिए एक अच्छा सूट खरीद लेना।

अशोक ने शुभम् के साथ भोजन किया और अपने काम पर चला गया। शुभम् बाजार गया। उसने एक छोर से दूसरे छोर तक बाजार का चक्कर लगाया किन्तु उसे कपड़ों की कोई अच्छी दुकान दिखाई नहीं दी। आखिरकार एक कोने में उसे कपड़े की एक दुकान नजर आई। उसने वहाँ से माया के लिए एक सूट खरीदा और लौट आया। शाम को अशोक ने बताया कि कल उसकी छुट्टी रहेगी। शुभम् ने उसे अपना लाया हुआ सूट दिखाया। अशोक ने कहा–मैं चाहता हूँ कि मैं भी कल तुम्हारे साथ ही घर चलूँ।[7] मेरे साथ ढेर सारा सामान है। अगर तुम मेरे साथ रहोगे तो मुझे सुविधा होगी।[8] शुभम् ने कहा–कल हम साथ ही घर चलेंगे।

अभी आपने यह गद्यांश पढ़ा। इस गद्यांश में कई परस्पर सम्बद्ध सार्थक शब्द समूह हैं। ऐसा सार्थक शब्द समूह जो व्यवस्थित हो तथा पूरा आशय प्रकट करता हो, वाक्य कहलाता है, जैसे–शुभम् के बड़े भाई अशोक राजनगर में रहते हैं। यह शब्द समूह सार्थक है, व्याकरण के नियमों के अनुरूप व्यवस्थित है तथा पूरा आशय प्रकट कर रहा है। अत: यह एक वाक्य है।

आरंभ में दिए गए गद्यांश को ध्यान से पुन: पढ़िए; और रेखांकित शब्दों में लिखे वाक्यों को देखिए। रेखांकित वाक्य अर्थ की दृष्टि से एक दूसरे से भिन्न हैं। सामान्यत: वाक्य भेद दो दृष्टियों से किया जाता है –

1. अर्थ की दृष्टि से **2. रचना की दृष्टि से।**

1. अर्थ के आधार पर वाक्य के भेद

अर्थ के आधार पर वाक्यों के निम्नलिखित आठ भेद होते हैं–

- **विधानवाचक वाक्य** – जिन वाक्यों से किसी क्रिया के करने या होने की सामान्य सूचना मिलती है, उन्हें विधानवाचक वाक्य कहते हैं। किसी के अस्तित्व का बोध भी इस प्रकार के वाक्यों से होता है; जैसे –

  अशोक राजनगर में रहता है।

- **निषेधवाचक वाक्य** – जिन वाक्यों से किसी कार्य के निषेध (न होने) का बोध होता हो, उन्हें निषेधवाचक वाक्य कहते हैं। इन्हें नकारात्मक वाक्य भी कहते हैं; जैसे –

  मैं आज नहीं जाऊँगा।

- **प्रश्नवाचक वाक्य** – जिन वाक्यों में प्रश्न किया जाए अर्थात् किसी से कोई बात पूछी जाए, उन्हें प्रश्नवाचक वाक्य कहते हैं; जैसे –

  क्या तुम आज ही वापस जाओगे?

- **विस्मयादिवाचक वाक्य** – जिन वाक्यों से आश्चर्य (विस्मय), हर्ष, शोक, घृणा आदि के भाव व्यक्त हों, उन्हें विस्मयादिवाचक वाक्य कहते हैं; जैसे–

  अरे! शुभम् तुम!

- **आज्ञावाचक वाक्य** – जिन वाक्यों से आज्ञा या अनुमति देने का बोध हो,उन्हें आज्ञावाचक वाक्य कहते हैं; जैसे –

  तुम बाजार चले जाओ।

- **इच्छावाचक वाक्य** – वक्ता की इच्छा, आशा या आशीर्वाद को व्यक्त करने वाले वाक्य इच्छावाचक वाक्य कहलाते हैं; जैसे–

  मैं चाहता हूँ कि मैं भी कल तुम्हारे साथ ही घर चलूँ।

- **संदेहवाचक वाक्य** – जिन वाक्यों में कार्य के होने में सन्देह अथवा संभावना का बोध हो, उन्हें संदेहवाचक वाक्य कहते हैं; जैसे–

  शायद मैं देर से लौटूँ।

- **संकेतवाचक वाक्य** – जिन वाक्यों से एक क्रिया के दूसरी क्रिया पर निर्भर होने का बोध हो, उन्हें संकेतवाचक वाक्य कहते हैं। इन्हें हेतुवाचक वाक्य भी कहते हैं। इनसे कारण, शर्त आदि का बोध होता है; जैसे –

  अगर तुम मेरे साथ रहोगे तो मुझे सुविधा होगी।

वाक्य परिवर्तन

■ अर्थ की दृष्टि से वाक्य में परिवर्तन

आप पढ़ चुके हैं कि अर्थ की दृष्टि से वाक्य आठ प्रकार के होते हैं। इनमें से विधानवाचक वाक्य को मूल आधार माना जाता है। अन्य वाक्य भेदों में विधानवाचक वाक्य का मूलभाव ही विभिन्न रूपों में परिलक्षित होता है। किसी भी विधानवाचक वाक्य को सभी प्रकार के भावार्थों में प्रयुक्त किया जा सकता है।

जैसे-

1.	विधानवाचक वाक्य	-	अशोक राजनगर में रहता है।
2.	विस्मयादिवाचक वाक्य	-	अरे! अशोक राजनगर में रहता है!
3.	प्रश्नवाचक वाक्य	-	क्या अशोक राजनगर में रहता है?
4.	निषेधवाचक वाक्य	-	अशोक राजनगर में नहीं रहता है।
5.	संदेहवाचक वाक्य	-	शायद अशोक राजनगर में रहता है!
6.	आज्ञावाचक वाक्य	-	अशोक, तुम राजनगर में रहो।
7.	इच्छावाचक वाक्य	-	काश, अशोक राजनगर में रहता।
8.	संकेतवाचक वाक्य	-	यदि अशोक राजनगर में रहना चाहता है तो रह सकता है।

योग्यता विस्तार

1. जीवन में सौंदर्य और कला की आवश्यकता सम्बन्धी एक आलेख तैयार कीजिए।
2. विज्ञान ने हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कौन-कौन सी सामग्री प्रदान की है। भिन्न-भिन्न आवश्यकताओं के लिए सामग्रियों की सूची तैयार कीजिए ।
3. एक अच्छा विद्यार्थी बनने के लिए किन-किन गुणों का होना आप आवश्यक समझते हैं? अपने सुझाव लिखिए ।
4. कम से कम 5 प्रकार के अनाजों को एकत्रित करिए, तथा उन अनाजों के विषय में सम्पूर्ण जानकारी लिपिबद्ध करिए जैसे वह कब बोई जाती है, कब काटी जाती है आदि।

शब्दार्थ

पुष्ट = दृढ़, पक्का, मजबूत। **तृप्त** = संतोष। **क्षुधा** = भूख। **कामिनी** = सुन्दर स्त्री। **समिधा** = हवन में जलाने की लकड़ी। **प्रस्फुटित** = खिली हुई। **काफिला** = यात्रियों का दल। **तरजीह** = महत्व। **गलीज** = गंदा, मैला। **इफरात** = बहुत अधिक। **दीदार** = दर्शन, देखा-देखी। **यंत्रनाएँ** = कष्ट,पीड़ा। **वासनाएँ** = इच्छाएँ। **ऊषा** = प्रातः। **हस्तामलकवत्** = हथेली पर रखे हुए आँवले के समान। **अभक्ष्य** = जो खाने योग्य न हो। **अकाय** = जिसकी काया या शरीर न हो। **उन्नयन** = उन्नति।

पहली चूक

श्रीलाल शुक्ल

लेखक परिचय – प्रसिद्ध व्यंग्यकार – कथाकार श्रीलाल शुक्ल का जन्म 31 दिसम्बर सन् 1925 ई. में लखनऊ के पास अतरौली नामक ग्राम में हुआ था। इनकी शिक्षा-दीक्षा लखनऊ और इलाहाबाद में हुई। सन् 1950 ई. में आप भारतीय प्रशासनिक सेवा (आई.ए.एस.) के लिए चुने गए।

शुक्ल जी ने सन् 1955 ई. से साहित्य रचना आरम्भ की। उनका लेखन मुख्य रुप से व्यंग्य के लिए चर्चित हुआ। जासूसी और रहस्य-रोमांच के तत्वों का प्रयोग भी अपनी कुछ रचनाओं में किया है। श्रीलाल शुक्ल द्वारा लिखित 'राग दरबारी' धारावाहिक दूरदर्शन पर बहुत लोकप्रिय हुआ। इनकी रचनाओं की भाषा जन-जीवन से जुड़ी हुई है। जिसमें हिन्दी, उर्दू के साथ-साथ अंग्रेजी के भी प्रचलित शब्दों का प्रयोग किया गया है। शुक्ल जी द्वारा साहित्य सृजन अभी भी निरंतर जारी है।

रचनाएँ – 'अंगद का पाँव', 'यहाँ से वहाँ', 'सूनी घाटी का सूरज', 'अज्ञातवास', 'सीमाएँ टूटती हैं', 'आदमी का जहर', 'मकान' और 'राग दरबारी' आपकी प्रमुख रचनाएँ हैं।

केन्द्रीय भाव

'पहली चूक' व्यंग्य में लेखक ने उन शिक्षित जनों को अपनी रचना का केन्द्रबिन्दु बनाया है; जो शहर में निवास करते हैं और ग्रामीण वातावरण से पूर्णत: अनभिज्ञ होते हैं। ये पुस्तकों और चलचित्रों से प्राप्त जानकारी के आधार पर अपने मानस में काल्पनिक ग्राम का सृजन करते हैं। उनकी कल्पना उस समय खण्ड-विखण्ड हो जाती है, जब वे ग्रामीण परिवेश में पहुँचकर यथार्थ ग्राम्य-जीवन के दर्शन करते हैं।

लेखक ने सुख-सुविधापूर्ण शहरी वातावरण में रहकर ग्रामीण – समस्याओं को सुलझाने की असंगति को स्पष्ट किया है।

पहली चूक

''उत्तम खेती मध्यम बान,
अधम चाकरी भीख निदान।''

यह कहावत पहले मैं कई बार सुन चुका था। अब हुआ यह कि बी.ए. पास करने के बाद मुझे अधम चाकरी मिली ही नहीं। इसलिए उसे भीख निदान समझकर मैंने खेती के उत्तम व्यवसाय में हाथ लगाना चाहा और अपने गाँव चला आया।

मेरे चाचा ने मुझे समझाया कि खेती का काम है तो बड़ा उत्तम, पर फारसी पढ़कर जिस प्रकार तेल नहीं बेचा जा सकता, वैसे ही अंग्रेजी पढ़कर खेत नहीं जोता जा सकता। इस पर मैंने उन्हें बताया कि यह सब कुदरत का खेल है क्योंकि फारस में तेल बेचने वाले संस्कृत नहीं बोलते, खेत जोतते हैं।

चाचा बोले, ''बेटा यह खेती का पेशा तुमसे नहीं चलेगा। यह तो हम जैसे लोगों के लिए है। इसमें तो दिन-रात पानी और पसीना, मिट्टी और गोबर से खेलना पड़ता है।

इस पर मैंने जबाब दिया कि यह शरीर ही मिट्टी का बना हुआ है; और यह गोबर तो परम पवित्र वस्तु है। मिट्टी का स्थान यदि पंचभूतों में है तो गोबर का स्थान पंचगव्य में है।

मेरे मुँह से पवित्रता की बात सुनते ही चाचा दंग रह गए। आस-पास बैठे हुए लोगों में ''धन्य है, धन्य है'' का नारा लग गया। तब मैंने फिर कहना शुरू किया, ''और चाचा, यह खेती साधारण लोगों का पेशा नहीं है। बड़ों-बड़ों ने इसकी प्रशंसा की है। कार्लाइस ने इस पर लेख लिखे हैं, टॉलस्टाय तो स्वयं किसान ही हो गया था, वाल्टेयर खुद बागवानी करता था, ग्लैड्स्टन लकड़ी चीरता था। अपने देश में भी गौतम जैसे ऋषि गेहूँ बोते थे। वैसे तो कंद-मूल-फल खाने के कारण उनकी दिलचस्पी हॉर्टिकल्चर में थी और वे ज्यादातर फल और शकरकंद ही पैदा करते थे, इसलिए खेती को उत्तम मानना ही चाहिए। मैं कल से खेती करूँगा। मेरा यही फैसला है।''

मेरे चाचा मेरी बात से प्रभावित तो हुए पर बाले, ''बेटा, खेती करोगे पर इतना समझ लो कि खेतों के आस-पास न तो कॉफी हाउस होते हैं, न क्लब। सिनेमाघरों की गद्देदार कुर्सियों की जगह अरहर की ठूँठियों पर घूमना-फिरना होता है।''

यहाँ मैं आपको बता दूँ कि मुझे सिनेमा का बड़ा शौक है। वह इसलिए कि सिनेमा खेती की उन्नति का एक अच्छा साधन है। सिनेमा द्वारा खेती का बड़ा प्रचार हुआ है। बड़े-बड़े हीरो खेत जोतते जाते हैं, और गाते जाते हैं। हीरोइन खेत पर टोकरी में रोटी लेकर आती है। हरी-भरी फ़सल में आँखमिचौली का खेल होता है। फसल काटते समय हीरोइन के साथ बहुत-सी लड़कियाँ नाचती हैं और गाती भी हैं। वे नाचती जाती हैं; और फसल अपने आप कटती जाती है। ऐसे ही मधुर दृश्यों को देखकर, पढ़े-लिखे आदमी गाँवो में आने लगते हैं; और खेतों के चक्कर काटने लगते हैं। इस प्रकार सिनेमा द्वारा खेती की शिक्षा मिलती है। सच पूछिए तो खेती करने की सच्ची शिक्षा मुझे भी सिनेमा से ही मिली थी।

दूसरे दिन चाचा ने मुझसे खेतों पर जाकर काम करने के लिए कहा। मैंने पूछा, ''खेत कहाँ पर हैं।''

उन्होंने कहा, ''गाँव के दक्खिन की ओर, रमेसर के बाग के आगे से गलियारा जाता है। गलियारे से पश्चिम एक राह फूटती है। राह से उत्तर एक मेंड़ जाती है। मेंड़ के पूरब गन्ने का एक खेत है। गन्ने के खेत के पास बाजरा खड़ा है। वहीं अपने खेत जोते जा रहे हैं। तुम वहीं जाकर काम देखो।''

मैं चल पड़ा। कुँवार का महीना था। आसमान पर हल्के-हल्के बादल थे। ताड़ और खजूर के पेड़ हिल-हिलकर एक दूसरे के गले मिल रहे थे। सब कुछ सिनेमा-जैसा लग रहा था। तभी आगे एक कुआँ दीख पड़ा। सिनेमा में हीरोइन कुँए पर पानी भरती है और हीरो खेत की ओर जाते हुए उससे बातें करता है। कुआँ सुनसान था। किसी की पायल नहीं झनकी न कोई घड़ा फूटा। इसी तरह पूरा रास्ता कट गया। न खेतों में आँखमिचौनी का दृश्य दीख पड़ा न हीरो ने कोरस गाए। मुझे देहात से बडी निराशा हुई। मैं चुपचाप अपने रास्ते पर चलता गया।

अब मैं ऐसी जगह पहुँचा जहाँ मेरे खेत होने चाहिए थे। चाचा ने बताया था कि वहीं गन्ने का खेत है और वहीं बाजरा खड़ा है। मैं गन्ने के बारे में ज्यादा नहीं जानता था। इसलिए बाजरे का सहारा लेना पड़ा। एक मेंड़ पर एक अधेड़ किसान खड़ा हुआ था। उसके पास जाकर अपना गाना बन्द करते हुए मैंने पूछा, ''आपका नाम बाजरा तो नहीं है ?''

किसान ने मेरी ओर घूरकर देखा, फिर घबराहट के साथ पूछा, ''यह आप पूछ क्या रहे हैं ? मेरा नाम तो रामचरन है।''

मैने रामचरन के कंधे पर हाथ रखकर सार्वभौमिक मित्रता के भाव से कहा, ''तो भाई रामचरन, मुझे बताओ यह बाजरा कौन है? कहाँ रहता है ? यह खड़ा कहाँ है ? इसे क्यों खड़ा किया गया है ?'' मेरी बात सुनते ही रामचरन जोर से हँसने लगा। आस-पास काम करते हुए किसानों को पुकारकर उसने कहा, ''यह देखो, ये भैया तो बाजरे को आदमी समझ रहे हैं।'' दो-तीन किसान हँसते हुए वहीं आ गए। मैं समझ गया कि मुझसे चूक हो गई। इसलिए बात पलटते हुए मैंने कहा, ''ओ, मैं तो हँसी कर रहा था। दरअसल मैं तो बाजरे के पेड़ की छाँह ढूँढ रहा हूँ। उसी पेड़ के पास मेरे चाचा के खेत हैं।''

इस बार वे किसान कुछ और जोर से हँसे। मुझे भी झेंप-सी लगी। पर मैंने हँसकर इस बात को टाल दिया।

दूसरे दिन से ही मुझे इस बात की चिन्ता हुई कि ऐसी चूक मुझसे कहीं दुबारा न हो जाए। इसलिए कृषि शास्त्र की मोटी-मोटी किताबें मँगवाकर मैंने उनका अध्ययन आरम्भ कर दिया। गाँव से मैं हताश हो गया था। वहाँ वह था ही नहीं जो मैंने रुपहले पर्दे पर देखा था। फिर भी मैं अध्ययन करता रहा। अध्ययन करते-करते मैं इस नतीजे पर पहुँचा कि आदर्श खेती गाँव में हो ही नहीं सकती, वह शहर में ही होती है। यह सब इस प्रकार से हुआ।

मुझे बीज और खाद खरीदने के लिए बीजगोदाम जाना पड़ा। बीज गोदाम के कर्मचारी शहर गए हुए थे। इसलिए मैं भी शहर चला गया। दूसरे दिन मुझे अपने खेतों में अच्छे हलों से जुताई करानी थी। अच्छे हल शहर में मिलते हैं। इसलिए मैं फिर शहर पहुँचा। तीसरे दिन मुझ नहर में एक नया पाइप लगवाने की जरूरत जान पड़ी। उसके लिए नहर के बड़े इंजीनियर का हुक्म लेना पड़ता है। वे शहर में रहते हैं। इसलिए मैं फिर शहर गया। चौथे दिन कुछ कीटाणुनाशक दवाइयाँ खरीदने के लिए मुझे शहर का चक्कर लगाना पड़ा। फिर मुझे कृषि-विभाग के एक कर्मचारी की शिकायत करने के लिए शहर जाना पड़ा। उसके बाद मैं जितना ही खेती की समस्याओं को समझता गया उतना ही शहर जाने की आवश्यकता बढ़ती गई। इसलिए एक दिन मैंने कृषि-शास्त्र की सब किताबें एक बैग में बंद की और अपनी कार्डराय की पतलून और रंग-बिरंगी छापेदार बुश शर्ट पहनी, फेल्ट कैप लगाई और चाचा से कहा, ''देखिए यह खेती का काम ऐसा है कि बिना शहर गए इसे साधना कठिन है। इसलिए मै शहर जा रहा हूँ। वहीं रहूँगा और वहीं से वैज्ञानिक ढंग की खेती करूँगा।''

चाचा ने प्रसन्नतापूर्वक हँसकर कहा, ''जैसे खूँटे से छूटी हुई घोड़ी भूसे के ढेर पर मुँह मारती है, जैसे धूप में बँधी हुई भैंस तालाब की ओर दौड़ती है, वैसे ही तुम्हारा शहर की ओर जाना बड़ा स्वाभाविक और उचित है। मैं आदमी पहचानने में कभी चूक नहीं करता, पर तुम्हें पहचानने में ही मुझसे पहली चूक हुई। जाओ, शहर ही में रहकर खेती करो।''

मैंने भी प्रसन्न मुद्रा में कहा, ''नहीं चाचा। चूक आपसे नहीं हुई पहली चूक तो मुझी से हुई थी, जो मैंने बाजरे को पहले आदमी समझा और बाद में उसे छायादार पेड़ समझता रहा। पर कोई बात नहीं। अब मैं शहर में रहकर बाजरे के विषय में अपनी रिसर्च करूँगा; और बताऊँगा कि किस खाद के प्रयोग से बाजरे की लताओं में मीठे और बड़े बड़े फल लाए जा सकते हैं।''

इस प्रकार हम दोनों ने प्रसन्नतापूर्वक एक-दूसरे से विदा ली। मैं गुनगुनाता हुआ स्टेशन की ओर चल दिया और वे बैलों की पूँछ उमेठते हुए खेत की ओर चले गए।

◆◆◆

अभ्यास

बोध प्रश्न -

अति लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. 'आपका नाम बाजरा तो नहीं है' - यह कथन किसने किससे पूछा ?
2. रामचरन ने किसानों को पुकारते हुए क्या कहा ?
3. लेखक ने भाषायी चूक से बचने के लिए कौन-कौन सी तैयारी की ?
4. लेखक को बीज-गोदाम क्यों जाना पड़ा ?
5. लेखक के अनुसार कंद-मूल-फल खाने के कारण ऋषियों की दिलचस्पी किस व्यवसाय में थी ?

लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. चाचा ने लेखक को खेती के बारे में क्या समझाया ?
2. लेखक ने रामचरन के कंधे पर हाथ रखते हुए मित्र भाव से क्या-क्या प्रश्न किए ?
3. पंचभूत और पंचगव्य में क्या अंतर है?
4. ''शरीर ही मिट्टी का बना हुआ है'' किस अर्थ में प्रयुक्त हुआ है?
5. लेखक ने अंतिम बार शहर जाने का फैसला क्यों किया ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

1. ''पहली चूक'' पाठ का केन्द्रीय भाव लिखिए ?
2. 'सिनेमा से खेती की शिक्षा' पर लेखक के विचार लिखिए।
3. 'फारस में तेल बेचने वाले संस्कृत नहीं बोलते' इस कथन का भाव विस्तार कीजिए-

व्यंजन संधि-

ध्यान दीजिए -

1. निम्नलिखित वाक्यों को ध्यान से पढ़िए -

अ) सिनेमा खेती की उन्नति का एक अच्छा साधन है।

ब) अच्छे संकल्प की सिद्धि में समय लगता है।

स) संतोष और संयम सज्जन व्यक्ति के गुण हैं।

उपरोक्त वाक्यों में आए उन्नति,संकल्प, संतोष, संयम और सज्जन भाषायी दृष्टि से व्यंजन संधि के अंतर्गत आते हैं। आपको स्मरण होगा कि **'दो स्वरों के आपस में मिलने से स्वर संधि, दो व्यंजनों अथवा व्यंजन-स्वर के परस्पर मिलने से व्यंजन संधि तथा विसर्ग का स्वर या व्यंजन से मेल होने पर विसर्ग संधि होती है।'**

'उन्नति' शब्द में व्यंजन से व्यंजन वर्ण का मेल हो रहा है-

उन्नति = उत् + नति = त् + न का न्न में परिवर्तन होता है। इसी तरह सज्जन = सत् + जन = त्+ज का ज्ज में परिवर्तन होता है।

अत: निश्चित ही यह संधि, व्यंजनों के मेल से उत्पन्न परिवर्तन को बता रही है। जितने भी शब्द हैं उनके संधि होने की स्थिति में प्रथम वर्ण व्यंजन होता है जैसे -

सत् + भावना = सद्भावना

जगत् + नाथ = जगन्नाथ

नियमीकरण - व्यंजन संधि में परिवर्तन के अनेक नियम हैं। जैसे

1) वर्ग के प्रथम वर्ण का तृतीय वर्ण में परिवर्तन। जैसे-जगदीश = जगत् + ईश

2) वर्ग के प्रथम वर्ण का पंचमवर्ण में परिवर्तन - वाक्+मय = वाङ्मय

(इसमें क, च,ट,त,प, के बाद 'न' 'या' 'म' होने पर प्रथम वर्ण का रूपान्तरण पंचम वर्ण में हो जाता है। उदाहरण - क का ङ

3) त् सम्बन्धी विशेष नियम -

त या द के बाद च या छ हो तो त या द के स्थान पर च हो जाता है। यथा-

उत् + चारण = उच्चारण

4) त या द के बाद ज या झ हो तो त या द के स्थान पर ज हो जाता है। जैसे –
सत् + जन = सज्जन

5) 'म्' के बाद वर्ग का प्रथम वर्ण हो तो 'म्' के बदले विकल्प से अनुस्वार या उसी वर्ग का अनुनासिक वर्ण हो जाता है। यथा –
सम् + कल्प = संकल्प
सम् + तोष = संतोष

6) यदि किसी के पहले 'स' के पूर्व अ, आ को छोड़कर अन्य कोई स्वर आता है तो 'स' के स्थान पर ष हो जाता है। जैसे –
अभि + सेक = अभिषेक

व्यंजन ध्वनि के निकट स्वर या व्यंजन आने से व्यंजन में जो परिवर्तन होता है, उसे व्यंजन संधि कहते हैं।

विसर्ग संधि निम्नांकित शब्द को अलग-अलग कर पढ़ने पर वर्णों के मेल का चमत्कार दिखाई देता है।

जैसे :-

दु : + आत्मा = : + आ= रा= दुरात्मा

विसर्ग (:) के पश्चात स्वर अथवा व्यंजन , आने पर विसर्ग में जो विकार उत्पन्न होता है, उसे विसर्ग संधि कहते हैं।

कुछ उदाहरण विसर्ग के इस प्रकार है

विसर्ग का 'ओ' में परिवर्तन

यश: +गान= यशोगान, मन : +ज = मनोज, मन : + हर = मनोहर,

सर : +वर= सरोवर

पुर: + हित = पुरोहित

नियम : -1

यदि 'अ' के बाद विसर्ग हो और आगे वर्गों के तृतीय , चतुर्थ, पंचम वर्ण अथवा य,र, ल, व, ह में से कोई हो तो विसर्ग का 'ओ' हो जाता है।

उपरोक्त उदाहरणों में विसर्ग के बाद ग, ज, ह, व , ह आया है अत: विसर्ग 'ओ' में परिवर्तित हो गया है।

विसर्ग का 'र' में परिवर्तन के कुछ उदाहरण इस प्रकार है।

नि: + आशा= निराशा, नि: +धन= निर्धन, दु:+ आत्मा =दुरात्मा

दु: + गुण = दुर्गुण, नि: + मल = निर्मल, दु: +घटना= दुर्घटना

इन उदाहरणों में हमने देखा - जब विसर्ग के पूर्व इ, उ आया है और विसर्ग के बाद आ, ग, म, घ, वर्ण आए हैं, तब विसर्ग के स्थान पर 'र' होता है।

नियम : - 2

यदि विसर्ग के पूर्व अ,आ को छोड़कर कोई अन्य स्वर आए और बाद में किसी वर्ग का तृतीय, चतुर्थ, पंचम वर्ण अथवा य, ल, व, द वर्ण आएँ तो विसर्ग के स्थान पर 'र' हो जाता है।

अब हम विसर्ग के श, स, ष में परिवर्तन को देखते हैं।

जैसे – नि: + चल =निश्चल, दु: +चरित्र = दुश्चरित्र

नि: + छल= निश्छल, नि: + चय = निश्चय

उपर्युक्त उदाहरणों में विसर्ग के बाद च, अथवा छ आने पर विसर्ग का श् होता है।

नियम - 3

उदाहरण -

नि: +प्राण= निष्प्राण, नि: +कपट= निष्कपट

उपर्युक्त उदाहरण में विसर्ग के बाद प, फ अथवा क, ख आने पर विसर्ग के स्थान पर 'ष्' हो जाता है।

नियम - 4

अब हम विसर्ग के स्थान पर स् के उदाहरण देखते हैं।

नम: +कार= नमस्कार, नि: + तार=निस्तार

नि: +तार= निस्सार, नम: +ते= नमस्ते

नियम - 5

हमने देखा कि विसर्ग के बाद क, त, स आने पर विसर्ग के स्थान पर स् हो जाता है।

कुछ शब्दों के साथ विसर्ग में कोई परिवर्तन नहीं होता है।

जैसे- अंत: + करण =अंत : करण, प्रात: +काल = प्रात: काल

पय : + पान= पय: पान, अध : +पतन= अध:पतन

प्रश्न- 1 निम्नलिखित शब्दों का संधि-विच्छेद करते हुए संधि का नाम बताइए -

वागीश, कीटाणु, ग्रन्थालय, महेश, उन्नति

प्रश्न- 2 निम्नलिखित वाक्यों में संकेत के अनुसार परिवर्तन कीजिए -

1. खेत के पूरब में गन्ने का एक खेत है। (प्रश्नवाचक वाक्य)
2. मैं खेती के बारे में अधिक जानता हूँ। (निषेधात्मक वाक्य)
3. यह आप क्यों पूछ रहे हो ? (विस्मयबोधक वाक्य)

योग्यता विस्तार

1. स्थानीय बोली के शब्दों की सूची तैयार कर उन्हें मानक भाषा में बदलिए।
2. शिक्षक के सहयोग से हिन्दी के प्रसिद्ध व्यंग्यकारों के नाम संकलित कीजिए।
3. 'खेती का महत्व' विषय पर अपने विचार लिखकर कक्षा में सुनाइए ।
4. आपने खेत देखे होगें। खेतों में कब-कौन सी फसल उगाई जाती है किसान से मिलकर पता कीजिए तथा उसे लिपिबद्ध करिए।

शब्दार्थ

यथार्थ = वास्तविक। **कुदरत**=प्रकृति। **पंचभूत**=पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश,वायु (पंचतत्व)। **पंचगव्य**=दूध, दही, घृत, गोबर, गोमूत्र का मिश्रण। **आँख**=मिचौली-लुका-छिपी (बच्चों का एक खेल)। **गलियारा**=सँकरी गली। **कोरस**=समूहगान। **पतलून**=अंग्रेजी ढंग का पायजामा। **बान**=व्यवसाय, धंधा। **अधम**=निम्न, निचले स्तर का। **हार्टिकल्चर**=बागवानी। **सार्वभौमिक**=विश्वजनीन सब लोक की। **रिसर्च**=खोज, अनुसंधान।

मेरे गाँव की सुख और शांति किसने छीन ली?

कवि परिचय – 'लोक संस्कृति-पुरुष' के रुप में प्रख्यात, निमाड़ी लोक साहित्य के मर्मज्ञ पण्डित रामनारायण उपाध्याय का जन्म 20 मई सन् 1918 को जिला खण्डवा के कालमुखी नामक ग्राम में हुआ। इनके पिता का नाम श्री सिद्धनाथ एवं माता का नाम दुर्गादेवी था। पत्नी शकुन्तलादेवी की स्मृति में आपने 'लोक संस्कृति' न्यास की स्थापना 27 नवम्बर सन् 1989 को की।

उपाध्याय जी 'मध्यप्रदेश आदिवासी लोककला परिषद-भोपाल' एवं 'राष्ट्रभाषा परिषद्-भोपाल' के संस्थापक सदस्य रहे। 20 जून सन् 2001 ई. को अपनी इहलीला समाप्त कर दिव्य-ज्योति में विलीन हो गए।

पण्डित उपाध्याय जी की प्रकाशित कृतियों की संख्या चालीस से अधिक है, जिनमें प्रमुख रूप से – 'कुंकुम-कलश और आम्रपल्लव', 'हम तो बाबुल तोरे बाग की चिड़िया', 'कथाओं की अन्तर्कथाएँ', 'चतुर चिड़िया' तथा 'निमाड़ का लोक साहित्य और उसका इतिहास' उनकी पुरस्कृत कृतियाँ हैं।

पण्डित रामनारायण उपाध्याय घर के विद्वत वातावरण एवं संस्कृतनिष्ठ संस्कारों के कारण अंग्रेजी-हिन्दी में निरन्तर अध्ययन एवं अध्यवसायरत रहे; फलत: एक विशद जीवन-दृष्टि को आत्मसात् कर सके। ग्राम की माटी की गंध तथा लोक पुरुष की रहनि से युक्त पण्डित उपाध्याय के व्यक्तित्व में एक सच्चे किसान की भावुकता, सहृदयता और क्रियाशीलता समाहित है। इन वैयक्तिक विशेषताओं के दर्शन आपकी रचनाओं में भी सहज ही हो जाते हैं। उपाध्याय जी अपने आस-पास के परिवेश को पूर्णतया हृदयंगम करके ही रचनाकर्म से जुड़ते हैं जिससे आपके रचनाकर्म की पीठिका में लोक-चिन्ता, प्रकृति उपासना जैसे गूढ़ विषयों की व्यापकता समाहित हो सकी है। उनके साहित्य सृजन में सम्पूर्ण निमाड़ी लोक-साहित्य पर समग्र लेखन तो है ही, ललित निबंध, व्यंग्य, रूपक, संस्मरण, रिपोर्ताज और गांधी-साहित्य इत्यादि का वैविध्य भी है। उपाध्याय जी की वाणी, वेश और आचरण-व्यवहार में जहाँ गांधीवादी जीवन और विचार प्रत्यक्ष होते थे; वहीं ग्राम और ग्राम्य-संस्कृति मूर्तिमान होती थी।

केन्द्रीय भाव

रामनारायण उपाध्याय का लोक जीवन से गहरा संपर्क रहा है वे गाँव के लेखक हैं। गाँव उनकी चेतना में रचा-बचा है। भारत गाँवों का देश है। गाँव भारत की आत्मा हैं। आज भी भारत की लगभग सत्तर प्रतिशत आबादी गाँव में निवास करती है।

प्रस्तुत निबंध में गाँव की संस्कृति पर दृष्टिपात किया गया है किंतु निबंधकार गाँव के वर्तमान को लेकर चिंतातुर हैं। गाँव अपनी पहचान खोते जा रहे हैं। गाँवों की पहचान समाप्त होती जा रही है तो भारतमाता की पहचान के बिन्दु भी धूमिल पड़ रहे हैं।

गांधी और रवीन्द्रनाथ जी ने सहज जीवन के प्रणेता गाँवों को ही आदर्श मानकर शांति निकेतन और 'सेवाग्राम' की स्थापना की थी। गाँव जो अपनी प्राकृतिक जीवन की सदैव परिकल्पना प्रदान करते रहे हैं वे गाँव अब आधुनिकता के दबाब में इस सुख से वंचित हो रहे हैं। लोक-गीतों की धुनें अब गाँव से गायब हैं। वे लोकगीत भी ऐसे जो मानवीय संवेदना से आपूरित थे, लगता है कि लोकगीतों के साथ ही मानवीय संवेदनाएँ चली गई हैं। अपनी आर्थिक व्यवस्था में आत्मनिर्भर गाँवों की आर्थिक स्थिति छिन्न-भिन्न हो चुकी है। गाँवों से निरंतर मजदूरों का पलायन हो रहा है। गाँवों का शिल्प और उसके शिल्पकार अब उदास हो गए हैं। गाँवों की वन्य प्रकृति नष्ट की जा रही है। पहले गाँवों का आदमी निरक्षर जरूर था किंतु वह सुसंस्कृत था। उसमें आस्था और विश्वास जैसे भाव कूट-कूटकर भरे थे, वह श्रम और संघर्ष का पक्षधर था। वह सामाजिक समरसता में जीता था। गाँव अपनी इन विशेषताओं के कारण ही तो गाँव था। उसका इतिहास उसकी लोक-कथाओं और उसकी लोक कहावतों में जीवित था। आज गाँव अपना रूप बदल चुके हैं। अब गाँव में अशांति है। गाँव में बेरोजगारी है गाँव में नीरसता है गाँव गरीब हैं। लेखक ने निबंध के अंत में अपना विश्वास जताया है कि परिवर्तन को रोका नहीं जा सकता है, किंतु इस परिवर्तन में हमें अपनी लोक चेतना के विभिन्न आयामों को जीवित और जागृत करने का भी जतन करना होगा। निबंध की भाषा सहज, सरल और प्रभावशाली है। भाषा की सादगी की प्रभाव क्षमता इस निबंध में देखने को मिलती है।

मेरे गाँव की सुख और शांति किसने छीन ली?

जिन गाँवों ने हिन्दी साहित्य को 'होरी' और 'गोबर' जैसे पात्र दिए, जिन गाँवों के लिए गांधी और रवीन्द्रनाथ टैगोर ने शहरों की समस्त सुविधाओं को त्यागकर 'शान्ति निकेतन' और 'सेवाग्राम' को अपना कार्यस्थल बनाया, जिन गाँवों में रहने के लिए साधारण नागरिक ही नहीं कवियों का मन भी ललचाया था, वे ही गाँव आज अशान्ति के घर हुए जा रहे हैं; और जैसे किसी भी आँख से आँसू गिरे ऐसे गाँवों के आँचल से एक-एक घर टूटते ही चले जा रहे हैं।

यही सब देखकर पूछने को जी चाहता है कि आखिर मेरे गाँवों की सुख और शांति को किसने छीन लिया ? मेरे गाँवों की अन्न-धन और लक्ष्मी कहाँ चली गई ? किसान के कंठ से गीत कहाँ लुप्त हो गए ? तीज-त्यौहार की मस्ती किसने चुरा ली ?

जिन गाँवों में लोक संस्कृति का जन्म हुआ, जिसने लोक की जीवन्त रसधारा को, अपने हृदय में सुरक्षित रखा, वे ही गाँव आज टूटते जा रहे हैं गाँव की वह पुरानी पीढ़ी भी समाप्त होती जा रही है जिसका सम्पूर्ण जीवन श्वास-प्रश्वास की तरह गीतों के ताने-बाने पर आधारित था। अब तो वे गोकुल से सहज-सरल गाँव नष्ट होते जा रहे हैं, जहाँ स्त्रियाँ भोर में उठकर आटे के साथ घने अँधेरे को भी पीसकर सुहावने प्रभात में बदल देती थी। जहाँ चक्की के हर फेरे के साथ गीत की नई पंक्तियाँ उठती थीं। लगता था जैसे श्रम में से संगीत का जन्म हो रहा हो और संगीत लोरी बनकर श्रम को हल्का करने में अपना योगदान दे रहा हो। ऐसे में गीत के बोल चलते-निर्मल चाँदनी रात फैली हुई है तारे का उदय कब होगा? ''तारे का उदय तो पिछली रात में होगा, जब पड़ोसिन जाग जाएगी और दही बिलोने की आवाज के साथ चक्की का स्वर गूँजेगा।'' अब गाँव में कोई मजदूर यह गाते हुए नहीं मिलेगा कि 'हे धरती माता अपने हृदय को जरा नरम बना लो ताकि कुदाली चलाने वाले मेरे पिया के हाथ में छाले न पड़ जाएँ', अब कोई किसान हल की मूठ के साथ यह गाता नजर नहीं आएगा कि 'हे सूरज तुम धीरे-धीरे तपो ताकि मेरी स्त्री के सिर पर उगा हुआ कुमकुम का दूसरा सूरज पिघल न जाए। फ्लोर मिल के साथ चक्की के गीत समाप्त होते जा रहें हैं- और ट्रेक्टर के साथ हल के गीतों का लोप होता जा रहा है।

पहले जो आदमी गाँव का समृद्ध किसान माना जाता था, वही अब बढ़ती मँहगाई और शोषणकारी समाज व्यवस्था के चलते अपनी जमीन से हाथ धोकर खेतिहर मजदूर में बदलता जा रहा है और सचमुच मजदूर था वह जमीन पर से किसान का आधिपत्य कम हो जाने से शहरों में मजदूरी करता नजर आता है।

गाँवों में कुम्हार तो हैं लेकिन उस कुम्हारी के धंधे का लोप हो चुका है, जिसकी हथेली स्पर्श पाकर माटी नए-नए रूप धरती थी। वह कभी गागर बनकर पनिहारिन के सिर पर इठलाती, कभी खपरैल बनकर झोपड़ी की माँग सँवारती। तो कभी नन्हें से माटी के दीप की छौनी अँगुली बन कर आशा की किरण जगा जाती थी। गाँव में तेल निकालने वाले तो हैं लेकिन तिल में अब इतना तेल नहीं रहा जो उसकी सूखी हड्डियों को स्निग्धता प्रदान कर सके। गाँव का जो सुतार पहले लकड़ी की गाड़ियाँ बनाकर ग्राम लक्ष्मी को खेतों से घर लाने में सहायता पहुँचाता था, अंधे की लाठी की तरह उसकी उसी लकड़ी का ठेकेदारों के द्वारा अपहरण कर लिए जाने से स्वयं उसका जीवन धुरीहीन हो गया है।

अमराई में अब कोयल नहीं कूकती वरन् ठेकेदारों के नौकर चीखते हैं। जंगलों में अब आदिवासी जन की वंशियाँ नहीं बजती। जिस कला और संस्कृति से आदमी ऊर्जा पाता आया था वह सब संग्रहालय में रखने की वस्तु बनती जा रही है; और लोकगीतों के स्वर गलों से लुप्त होकर 'टेप' में कैद किए जा रहे हैं।

ललित कलाओं का स्वभाव फूल की तरह होता है। वे अपनी जमीन पर अपने मन से खिलती और बढ़ती आई हैं। लोक साहित्य का कार्य महज लोकगीत, लोककथाओं और लोक कहावतों के संकलन का कार्य नहीं है वरन् यह जो

अनादि काल से अनंत काल तक मानव की जीवन यात्रा चली आ रही है, उसमें वह कहाँ गिरा, कहाँ उठा और कहाँ आगे बढ़ा, इस सबकी खोज शोध और अध्ययन का कार्य है।

गाँव का आदमी निरक्षर भले हो, लेकिन सुसंस्कृत रहा है। वह विश्वास पर बिक जाता है, धर्म पर झुक जाता है, सबको सहता है पर शिकायत नहीं करता, सबकी सुनता है पर अपनी ओर से कुछ नहीं कहता। वह कभी थक कर नहीं बैठता, झुक कर नहीं चलता और त्याग में से प्राप्ति तथा परिश्रम में से आनन्द पाता आया है। दुख का पहाड़ आ जाए तो सुख की क्षीण रेखा वह सदा मुस्कुराता है और अकेला रह जाने पर भी अपनी राह चलना नहीं छोड़ता। विभिन्न जातियों, मतों और वर्गों में बँटे होने पर भी वह समूचे गाँव को एक परिवार मानता आया है।

गाँवों का आदमी जाने कब से बाट जोह रहा है कि कोई आए और उससे भी कुछ ले जाए। उसका समग्र जीवन एक अनपढ़ी खुली पुस्तक की तरह सामने बिछा है। उनका रहन-सहन, खान-पान, वस्त्राभूषण, आचार-विचार, रीति-रिवाज, विश्वास और मान्यताएँ, गीत और कथाएँ, नृत्य, संगीत और कलाएँ हमें कुछ न कुछ देने की क्षमता रखते हैं।

बदलते हुए समय में लोक संस्कृति के बदलते हुए रूप से इन्कार नहीं किया जा सकता । लोक साहित्य में युग के अनुकूल अपने को ढालने की और नया युग का मार्गदर्शन करने की अपूर्ण क्षमता होती है। चुनौती के सामने सिर झुकाना लोक का स्वभाव नहीं है। लोक की गंगा तो युग-युग से प्रवाहमान रही है।

◆◆◆

अभ्यास

बोध प्रश्न -

अति लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. गांधी द्वारा स्थापित आश्रम का नाम लिखिए।
2. लोक संस्कृति का जन्म कहाँ हुआ?
3. लेखक ने संगीत का जन्म किससे माना है ?
4. ललित कलाओं का स्वभाव कैसा होता है ?
5. ग्रामीण समूचे गाँव को किस रूप में मानता आया है ?

लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. लेखक समाज से किन प्रश्नों को पूछना चाहता है ?
2. लोक की जीवन्त रस-धारा को किसने, कहाँ सुरक्षित रखा है ?
3. अंधेरे को सुहावने प्रभात में कौन, कैसे परिवर्तित करता है ?
4. गाँव के समृद्ध किसान की स्थिति अब कैसी हो गई है ?
5. श्रम से किसका जन्म होना प्रतीत हो रहा है?
6. माटी कुम्हार की हथेली के स्पर्श से किन नवीन रूपों को धारण कर रही है?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

1. ललित कलाओं का ग्राम्य-जीवन में क्या महत्व था ?
2. लोक गीत ग्रामीण जीवन में किस प्रकार रचे-बसे थे ?
3. लेखक के अनुसार ''गोकुल के सहज-सरल गाँव'' का आशय स्पष्ट कीजिए ?
4. गाँव के सुसंस्कृत आदमी की पाँच विशेषताएँ लिखिए ।
5. गाँव के कुटीर उद्योगों पर आधुनिकता का क्या प्रभाव पड़ा है ?
6. गाँव का आदमी अपने समग्र जीवन से क्या-क्या देने की क्षमता रखता है ?

भाषा अध्ययन -

1. निम्नलिखित शब्दों का सन्धि-विच्छेद कीजिए और नाम लिखिए-
   रवीन्द्र, निरक्षर, संग्रहालय, सज्जन
2. निम्नलिखित शब्दों का समास-विग्रह कीजिए -
   कार्यस्थल, रसधारा, श्वास-प्रश्वास, लोक संस्कृति
3. निम्नलिखित शब्दों की सन्धि कीजिए -
   पर + उपकार, देव + ऋषि, अति + आचार, प्रति + एक
4. निम्नलिखित वाक्यांशों के लिए एक-एक शब्द लिखिए -
   1. ठेका लेने वाला -
   2. खेती करने वाला -
   3. मिट्टी के बर्तन बनाने वाला -
   4. पानी भरने वाली -
5. निम्नलिखित वाक्यों को पहचानकर अर्थ के आधार पर वाक्य प्रकार का नाम लिखिए -
   1. किसान के कंठ से गीत कहाँ लुप्त हो गए ?
   2. गाँवों में लोक संस्कृति का जन्म हुआ।
   3. मेरे गाँव की शांति मत छीनो ।
   4. निर्मल चाँदनी, रात को नहीं फैली थी ।
   5. मैं चाहता हूँ कि आप एक बार गाँव अवश्य जाएँ।

योग्यता विस्तार

1. किसी एक गाँव में जाइए और वहाँ के लोक-जीवन की विशेषताओं को अपनी डायरी में लिखिए।
2. ''बदलते परिवेश में ग्रामीण संस्कृति लुप्त हो रही है'' इस पर अपने विचार 150 शब्दों में लिखिए।
3. ''आधुनिकता का प्रभाव, प्रकृति और मानवीय संबंधों के संतुलन का विनाशक है'' इस विषय के पक्ष-विपक्ष में तर्क दीजिए।
4. गाँवों में कुटीर उद्योग समाप्ति की कगार पर खड़े हैं ऐसे में आप कुटीर उद्योग और औद्योगिक विकास के संतुलन पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।
5. गाँव में खेतों तथा अन्य लघु उद्योगों में प्रयोग किए जाने वाले औजारों की सूची बनाइए।

शब्दार्थ

लोक संस्कृति = गाँव की संस्कृति। **जीवन्त** = जीवित, प्रामाणिक। **श्वास-प्रश्वास** = साँस लेना और छोड़ना। **शोषणकारी** = सताने वाला, अनुचित लाभ लेने वाला। **खेतिहर** = मजदूरी से खेत पर कार्य करने वाला। **आधिपत्य** = स्वामित्व, अधिकार। **धुरीहीन** = आधार हीन। **अनादि** = आदि रहित। **प्रवाहमान** = गतिशील, निरन्तर चलता हुआ।

सच्चा धर्म

लेखक परिचय – नाटककार सेठ गोविन्ददास का जन्म सन् 1896 में मध्यप्रदेश के जबलपुर नगर में एक सभ्रांत सेठ परिवार में हुआ। आपकी शिक्षा-दीक्षा घर पर ही हुई। आपका परिवार धार्मिक प्रवृत्ति का था। बारह वर्ष की अवस्था में सेठ गोविन्द दास ने तिलस्मी उपन्यास 'चम्पावती' की रचना की। उस समय आप बाबू देवकी नन्दन खत्री रचित 'चन्द्रकांता' से बहुत प्रभावित थे। बल्लभ सम्प्रदाय के ललित उत्सवों, रामलीला, पारसी नाटक कम्पनी के अभिनयों में आपकी विशेष रुचि थी। सन् 1919 में 'विश्वप्रेम' नाटक लिखा और खेला। इसी वर्ष गांधी जी के प्रभाव में आए और भारतीय राजनीति में भाग लेना प्रारंभ किया। स्वतंत्रता संग्राम के दौरान अनेक बार जेल यात्राएँ कीं। सन् 1974 में आपका निधन हुआ।

सेठ गोविन्ददास मूलत: नाटककार हैं। आपके एकांकी और नाटक का क्षेत्र अत्यंत व्यापक है। आपने पौराणिक, ऐतिहासिक, राजनीतिक, सामाजिक, नारी समस्या और वैयक्तिक समस्या प्रधान एकांकी, नाटक लिखे हैं। प्रमुख नाटक – 'कर्तव्य', 'कर्ण', 'कुलीनता', 'हर्ष', 'शशिगुप्त', 'शेरशाह', 'अशोक', 'सिंहल द्वीप', 'विजय बेलि', 'विश्व प्रेम', 'सिद्धांत स्तातंत्र्य', 'पाकिस्तान', 'भूदान', 'दलित कुसुम', 'पति', 'सेवापथ', 'बड़ा पापी कौन', 'गरीबी और अमीरी' आदि हैं। 'सप्तरश्मि', 'एकादशी', 'चतुष्पथ', 'पंचभूत' आदि आपके एकांकी संग्रह हैं।

आपने जीवन की विविधता को निकट से देखा है और उसे ही नाटकों, एकांकियों में जीवंत रूप में चित्रित किया है। आप उदात्त विचारों के विकास के लिए तीव्र संघर्ष, मनोरंजक कथा और विशद् चरित्र की योजना अपने एकांकियों में की है। आपकी एकांकियों में दैनिक जीवन से सम्बद्ध कथानक देखे जाते हैं। चरित्र चित्रण और संवाद गतिशील व आकर्षण होते हैं। भाषा भाव, शिल्प आदि के सफल निर्वाह के कारण एकांकियाँ चुस्त-दुरुस्त और प्रभावशाली बन पड़ी हैं।

केन्द्रीय भाव

ऐतिहासिक संदर्भ के माध्यम से व्यक्ति मूल्यों और सामाजिक मूल्यों की रक्षा के साथ राष्ट्रीय चेतना के भाव को परिपुष्ट करने वाला यह एकांकी सेठ गोविन्ददास की क्रांतिकारी सामाजिक दृष्टि को प्रकट करता है।

इस नाटक में शिवाजी अपने कौशल से जब औरंगजेब के कारागार से मुक्त होते हैं, तब वे अपने पुत्र सम्भाजी को दिल्ली के एक महाराष्ट्रीय ब्राह्मण पुरुषोत्तम के घर में छिपा देते हैं। इस घटना की भनक औरंगजेब को लगती है वह इसकी सत्यता के प्रतिपादन हेतु अपने दो सैनिकों को पुरुषोत्तम के पास भेजते हैं। पुरुषोत्तम की सत्यनिष्ठा और आचारनिष्ठा चतुर्दिक चर्चित है। इसे औरंगजेब के सैनिक भी अच्छी तरह से जानते हैं कि पुरुषोत्तम कभी असत्य संभाषण नहीं करते हैं और न किसी के साथ बैठकर भोजन करते हैं। पुरुषोत्तम ने संभाजी को अपना भांजा घोषित कर दिया था। औरंगजेब के सैनिक पुरुषोत्तम से बचनबद्ध होते हैं कि यदि वे अपने भांजे के साथ एक थाली में भोजन कर लेते हैं तो सैनिक स्वीकार कर लेंगे कि पुरुषोत्तम के यहाँ रहने वाला लड़का सम्भाजी नहीं है।

पुरुषोत्तम और उनकी पत्नी अहिल्या के मध्य इस तथ्य को लेकर बराबर चिंतन चलता है कि इस परिस्थिति में क्या करणीय है ? अहिल्या अपने पति को समझाती है कि उन्हें असत्यवादन नहीं करना चाहिए इसी में भलाई भी है। एक तो असत्य वचन करके वे आचार भ्रष्ट नहीं होंगे दूसरे औरंगजेब उन्हें इस हेतु पुरस्कृत भी कर सकता है। पुरुषोत्तम अपना निर्णय पहले ही व्यक्त कर चुके हैं। उन्होंने स्पष्ट कर दिया है – ''अनेक बार सत्य के स्थान पर मिथ्या भाषण सत्य से बड़ी वस्तु होती है, जीवन में धर्म से बड़ी कोई चीज नहीं है, धर्म की रक्षा यदि असत्य से होती है तो असत्य, सत्य से बड़ा हो जाता है, अपने इसी सिद्धांत को प्रमाणित करने के लिए पुरुषोत्तम सम्भाजी के साथ एक थाली में बैठकर भोजन करते हैं। पुरुषोत्तम इस प्रकार अपने संपूर्ण आचारनिष्ठ कर्मकांड से विचलित होकर भी अपने व्यक्ति मूल्य और सामाजिक मूल्य की रक्षा करते हैं।''

सम्भाजी की रक्षा का उद्देश्य जहाँ राष्ट्रीय भावना से अनुप्रेरित है, वहाँ आश्रित को अभय का वातावरण प्रदान करने की भावना भी इसमें निहित है इन महत उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए वैयक्तिक आचार निष्ठा को खंडित कर युग-धर्म की महत्ता को भी प्रतिपादित किया गया है। नाटक में पुरुषोत्तम को केन्द्रीय पात्र के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। पुरुषोत्तम की राष्ट्रीय भावना उसके समयानुकूल कर्तव्य भाव को जागृत कर सच्चे धर्म की स्थापना करती है। पुरुषोत्तम की पत्नी स्वार्थ केन्द्रित अधिक है, इसलिए उसका चिंतन व्यावहारिक होते हुए भी तत्कालीन परिस्थिति में धर्मानुकूल नहीं है। संपूर्ण एकांकी परिस्थिति अनुसार परिवर्तित धर्म के स्वरूप को महत्व प्रदान करती है, यह लेखक का क्रांतिकारी दृष्टिकोण है।

सच्चा धर्म

पात्र-परिचय

पुरुषोत्तम	:	दिल्ली निवासी एक महाराष्ट्रीय ब्राह्मण।
अहिल्या	:	पुरुषोत्तम की पत्नी
सम्भाजी	:	शिवाजी का पुत्र
दिलावर खाँ	:	औरंगजेब की खुफिया जमात का एक सरदार
रहमानबेग	:	दिलावार खाँ का मातहत

पहला दृश्य

स्थान : दिल्ली में पुरुषोत्तम के मकान का एक कमरा

समय : मध्यान्ह के निकट

(कमरा छोटे से मकान के छोटे से कमरे सदृश दिखाई देता है, दीवारें स्वच्छता से पुती हुई हैं। दीवारों में जो दवाजे खिड़कियाँ है, उनसे बाहर की एक तंग गली के कुछ मकान दिखाई पड़ते हैं। एक दरवाजे से नीचे उतरने के लिए जीने की कुछ सीढ़ियाँ दिखाई देती हैं, कमरे की छत में काँच की हाड़ियाँ लटक रही हैं। कमरे की जमीन पर आधे में बिछायत है और आधी खाली है। कमरे में पुरुषोत्तम बेचैनी से इधर-उधर टहल रहा है। पुरुषोत्तम की अवस्था लगभग साठ वर्ष की है। वह गेहुएँ रंग और साधारण शरीर का मनुष्य है। सिर के बालों के पीछे शिखा है उसके चारों और छोटे-छोटे बाल और उसके चारों तरफ के बाल मुड़े हुए। मुख पर बड़ी-बड़ी मूँछें हैं। सारे बाल तीन चौथाई से अधिक सफेद हैं। वह लाल रंग का रेशमी उपरना ओढ़े है। उसी रंग का रेशमी सोला पहने हैं। उसके सिर पर श्वेत चन्दन का त्रिपुण्ड लगा हुआ है और वक्षस्थल पर मोटा यज्ञोपवीत दिखाई देता है। अहिल्या का प्रवेश। अहिल्या करीब पचपन वर्ष की अवस्था की गेहुएँ रंग की स्थूल शरीर की स्त्री है, बाल बहुत-से सफेद हो गए हैं। अब मराठा ढंग से लाल चारखाने की साड़ी और वैसी ही चोली पहने हुए है, कुछ सोने के आभूषण भी पहने है।)

अहिल्या : अभी-अभी वही हाल है, कोई निर्णय नहीं हो सका।

पुरुषोत्तम : (खड़े होकर) अहिल्या, यह प्रश्न कोई साधारण प्रश्न है।

अहिल्या : (बैठकर) कम से कम तुम सदृश सत्यवादी-व्यक्ति के लिए तो ऐसे प्रश्नों में असाधारणता नहीं होनी चाहिए। जन्म भर तुम्हारा सत्यव्रत अटल रहा। तुम सदा कहते रहे हो कि जीवन में यदि मनुष्य एक सत्य का आश्रय लिए रहे तो वह सत्य स्वयं ही सारे प्रश्नों का निराकरण कर देता है पर जब मनुष्य सत्य का आश्रय छोड़ मिथ्या का आसरा लेता है, तभी तरह-तरह के प्रश्न उठ खड़े होते हैं।

पुरुषोत्तम : (बैठकर आश्चर्य से) सत्य का आश्रय छोड़ मिथ्या का आसरा! मैं सत्य का आश्रय छोड़ मिथ्या का आसरा ले रहा हूँ?

अहिल्या : और क्या कर रहे हो ? सम्भाजी को शिवाजी तुम्हारे पास रख गए हैं, यह क्या सच नहीं है ? जो लड़का तुम्हारे पास रहता है, वह तुम्हारा भांजा है, यह कहना, सच बोलना है।

पुरुषोत्तम : सम्भाजी को सम्भाजी न कहकर अपना भांजा कहना, शिवाजी मेरे पास सम्भाजी को नहीं रख गए हैं, यह कहना साधारण सच बोलने से कहीं बड़ा सत्य है।

अहिल्या : तुम्हारी सत्य-प्रियता अधिकांश दिल्ली में प्रसिद्ध है। इसी कारण यवन तक तुम्हारा आदर करते हैं। हमारे विवाह को चालीस वर्ष हो चुके परन्तु आज तक मैंने तुम्हारे मुख से कोई मिथ्या वाक्य क्या, मिथ्या शब्द ही नहीं, मिथ्या अक्षर तक नहीं सुना। वही आज तुम बड़ी मिथ्या बात कहकर उसे साधारण सत्य भाषण से बड़ा कह रहे हो।

पुरुषोत्तम : अहिल्या, शास्त्रों में सत्य और असत्य की व्याख्या बड़ी बारीकी से की गई है। अनेक बार सत्य के स्थान पर मिथ्या भाषण सत्य से भी बड़ी वस्तु होती है। जीवन में धर्म से बड़ी कोई चीज नहीं है, धर्म की रक्षा यदि असत्य से होती है तो असत्य सत्य से बड़ा हो जाता है।

अहिल्या : धर्म की रक्षा ! अब तो तुमने और बड़ी बात कह दी। सम्भाजी को अपना भांजा बनाने से तुम धर्म की रक्षा कर सकोगे। दिलावर खाँ कह गया है कि वह उसे तुम्हारा भांजा तब मानेगा, जब तुम उसके साथ बैठकर एक थाली में भोजन करोगे। अन्य के साथ भोजन करने से आपके धर्म की रक्षा हो सकेगी?

पुरुषोत्तम : (उठकर फिर टहलते हुए) अहिल्या यही...यही प्रश्न मुझे व्यथित किए हुए है। जीवन भर मैंने जिस प्रकार धर्म का पालन किया है, उसे तुमसे अधिक और कोई नहीं जानता...नहीं....नहीं भगवान् तुमसे भी अधिक जानते हैं। (फिर बैठकर) मैंने त्रिकाल संध्या, तर्पण, हवन इत्यादि सारे धार्मिक कर्म नियमपूर्वक किए हैं, शौच-अशौच का सदा पूर्ण विवेक रखा है। भक्ष्याभक्ष्य की ओर अधिक ध्यान दिया है। किसी के हाथ का जल तक ग्रहण नहीं किया - वहीं मैं इस चौथेपन में अन्य के साथ बैठकर एक ही थाली में कैसे खाऊँगा, यह प्रश्न मुझे व्यथित - अत्यधिक व्यथित किए हुए है।

अहिल्या : मैंने तो कहा जन्म भर जिसके आश्रय में रहे हो, उस सत्य को न छोड़ो। औरंगजेब के सदृश बादशाह के राज्य में, उसकी राजधानी में रहते हुए भी तुम यह सफल-जीवन उसी सत्य के आश्रय के कारण बिता सके हो। इस चौथेपन में वह आसरा छोड़ने से बुरी और बात नहीं हो

सकती; विशेषकर तब, जब उस आसरे का सुफल तुम देख चुके हो। धर्म की टेढ़ी-मेढ़ी व्याख्याओं में पड़कर अपना जीवन भर का सीधा मार्ग छोड़ अपने कुटुम्ब को नष्ट मत करो।

पुरुषोत्तम : तो मैं यह कह दूँ कि वह लड़का शिवाजी का पुत्र सम्भाजी है, मेरा भांजा नहीं। मिठाई की टोकरी में छिपकर दिल्ली से भागते समय शिवाजी उसे मेरे पास छोड़ गए हैं।

अहिल्या : कम से कम तुम्हें सत्य बात कहने में पशोपेश होना ही न चाहिए।

पुरुषोत्तम : और इसका परिणाम क्या होगा ?

अहिल्या : परिणाम जो कुछ हो। तुम सदा कहते नहीं रहे हो कि सत्य बोलने के सम्मुख परिणाम की ओर मनुष्य को दृष्टि ही नहीं डालनी चाहिए ?

(पुरुषोत्तम सिर नीचा कर विचार-मग्न हो जाता है । कुछ देर निस्तब्धता)

पुरुषोत्तम : (एकाएक सिर उठाकर), नहीं...नहीं ... यह कभी नहीं हो सकता, यह कभी नहीं हो सकता। यह...यह विश्वास घात होगा। ऐसा... ऐसा पातक, जिससे बड़ा पातक सम्भव ही नहीं यह ...यह शरणागत का बलिदान होगा, ऐसा-ऐसा दुष्कर्म जिससे बड़ा हो नहीं सकता।

अहिल्या : पर दूसरी ओर तुम सत्य को तिलांजलि दे रहे हो। अन्य के साथ भोजन कर धर्म-नष्ट होने का प्रश्न तुम्हारे सम्मुख है; और स्वयं के भ्रष्ट होने का नहीं पर सारे कुटुम्ब के नष्ट हो जाने का.....

पुरुषोत्तम : (उठकर टहलते हुए) ओह ! ओह !

(तंग गली के कुछ मकान दिखाई पड़ते हैं। दिलावर खाँ और रहमानबेग खड़े हैं। दोनों अधेड़ अवस्था और गेहुएँ रंग के ऊँचे पूरे व्यक्ति हैं, दिलावर खाँ के दाढ़ी भी है। दोनों उस समय की सैनिक वर्दी लगाए हुए हैं।)

(लघु यवनिका)

दूसरा दृश्य

स्थान : दिल्ली की एक गली

समय : मध्याह्न के निकट

दिलावर खाँ : (विचार करते हुए) पण्डित पुरुषोत्तम राव झूठ बोलेंगे, ऐसा.....ऐसा यकीन तो नहीं होता।

रहमानबेग : जनाब, तमाम देहली में कौन ऐसा होगा जो उन्हें जानता न हो और यह मानता हो कि वे कभी झूठ बोल सकते हैं।

दिलावर खाँ : (उसी प्रकार विचारते हुए) लेकिन रहमानबेग वह लड़का पुरुषोत्तम का भांजा जैसा दिखता नहीं।

रहमानबेग : सिर्फ सूरत से कह सकना कि कौन भांजा है और कौन नहीं, यह तो एक बड़ी मुश्किल बात है।

(कुछ देर निस्तब्धता । दिलावर खाँ गम्भीरता से सोचता है और रहमानबेग उसकी तरफ देखता है।)

रहमानबेग : (कुछ देर बाद) फिर आपने तो पण्डित की बात पर ही यकीन करके मामले को नहीं छोड़ दिया, आपने तो उसे बहुत बड़ा सबूत देने के लिए कहा है। पुरुषोत्तम राव की बात ही काफी है, फिर अगर उस लड़के के साथ बैठकर खाना खा लेता है तब तो शक की गुजांइश ही नहीं रह जाती।

दिलावर खाँ : (सिर उठाकर) हाँ, पुरुषोत्तम किसी अन्य के साथ बैठकर थोड़े ही खा सकता है।

रहमानबेग : हाँ, चाहे जान निकल जाए तो भी न खाएगा।

दिलावर खाँ : पुरुषोत्तम राव के मानिन्द व्यक्ति तो कभी नहीं।

रहमानबेग : कभी नहीं, कभी नहीं ।

दिलावर खाँ : (ऊपर की तरफ देखकर) तो दोपहर हो रही है। पूजा पाठ के बाद उसने दोपहर को ही खाने के वक्त बुलाया था।

रहमानबेग : हाँ, वक्त हो रहा है, चलिए-चलिए।

(दोनों का प्रस्थान)

लघु यवनिका

तीसरा दृश्य

स्थान : पुरुषोत्तम के मकान का एक कमरा

समय : मध्याह्न

(दृश्य पहले के सदृश ही है। पुरुषोत्तम और अहिल्या बैठे हुए हैं। अहिल्या का मुख प्रसन्नता से खिल सा गया है, परन्तु पुरुषोत्तम के मुख पर वैसे ही उद्विग्नता दृष्टिगोचर होती है, पुरुषोत्तम पृथ्वी की ओर देख रहा है।)

अहिल्या : (ऊपर की ओर देखकर) धन्यवाद, अगणित बार धन्यवाद है भगवान् को कि अन्त में सत्य की उसने विजय करा दी। (पुरुषोत्तम की ओर देखकर) दिन भर का भूला-भटका यदि रात को भी घर लौट आए तो वह भूला नहीं कहलाता। उद्वेग के कारण तुमने एक बार मिथ्या अवश्य बोल दिया पर देर..... बहुत देर नहीं हुई, अभी भी समय था। दिलावर खाँ के आने के पहले तक समय था। अब उसको सारी बातें सच-सच कह देने पर मिथ्या भाषण के पाप से मुक्त हो जाओगे। जन्म भर जिस सत्य का आश्रय ले रखा है, उसी की शरण में रहने से कोई आपत्ति भी नहीं आएगी ?

(पुरुषोत्तम कोई उत्तर नहीं देता, अहिल्या उसकी ओर देखती रहती है। कुछ देर निस्तब्धता।)

अहिल्या : (कुछ देर बाद पुरुषोत्तम की ओर देखते हुए) देखा, देखा नहीं, एक केवल एक बार सत्य का आसरा छोड़ते ही कैसी ..... कैसी महान् आपत्ति आई। एक मिथ्या को सत्य सिद्ध करने के प्रयत्न में कितनी मिथ्या बातें कहनी पड़ती हैं, तुम सदृश सत्यवादी से अपने कथन की पुष्टि के लिए प्रमाण, महाभयंकर प्रमाण। तुम्हारा अन्य व्यक्ति के साथ एक थाल में भोजन । ओह ! यह ..... यह कभी सम्भव था।

(पुरुषोत्तम फिर कुछ नहीं बोलता, पर दृष्टि उठाकर अहिल्या की ओर देखने लगता है, अहिल्या चुपचाप उसकी ओर देखती है। कुछ देर निस्तब्धता।)

अहिल्या : (कुछ देर बार) जन्म भर का सारा पूजन-अर्चन समाप्त हो जाता, जीवन भर के सारे नियम व्रत भंग हो जाते। न जाने कितने जन्मों के पुण्यों के कारण इस कुल में जन्म लिया था और ऐसे

कुल में फिर इस जन्म में भी धर्म का कैसा पालन किया था। कभी सन्ध्या न छोड़ी, कभी तर्पण न त्यागा, कभी हवन न छोड़ा, किसी का जल तक पान न किया था। सब ..... सब चला जाता। स्वयं ही भ्रष्ट न होते, परन्तु ..... परन्तु सारा कुल भ्रष्ट हो जाता। लड़कियाँ कुँआरी रह जाती। लड़के की सन्तति का क्या होता? (कुछ रुककर) होता.....होता.....कैसे? ऐसा जन्म भर का सत्कर्म पल भर में नष्ट कैसे हो जाता ? भगवान् कैसे होने देते ?

(पुरुषोत्तम फिर कुछ नहीं बोलता, पर चुपचाप उठकर टहलने लगता है।)

अहिल्या कुछ देर तक बैठे-बैठे उसकी तरफ देखती है और फिर उठकर उसी के साथ टहलने लगती है।

अहिल्या : (टहलते-टहलते) और फिर यह सब किसी अपने के लिए नहीं दूसरे...दूसरे के लिए। (पुरुषोत्तम चुपचाप खड़ा होकर अहिल्या की ओर देखने लगता है। अहिल्या भी खड़ी हो जाती है।)

अहिल्या : हाँ, क्या ..... क्या प्रयोजन है हमें शिवाजी से और उसके इस पुत्र सम्भाजी से ? दूसरे के लिए हम क्यों अपना इहलोक और परलोक बिगाड़े, स्वयं नष्ट हों और अपने कुल को नष्ट करें ? (कुछ रुककर) सोचो, जरा सोचो तो कहीं औरंगजेब को पता लग जाए कि तुमने शिवाजी के पुत्र को आश्रय दिया और.....और उसे बचाने के लिए झूठ बोले और.....और उस झूठ को सत्य सिद्ध करने के लिए अपने धर्म-कर्म की भी परवाह न कर उसके साथ एक थाल में भोजन तक किया.....तो.....तो..... औरंगजेब के सदृश बादशाह क्या करेगा तुम्हारा और तुम्हारे सारे कुटुम्ब का ?

(पुरुषोत्तम फिर कुछ न कह टहलने लगता है। अहिल्या भी उसके साथ टहलती है। कुछ देर निस्तब्धता)

अहिल्या : (कुछ देर बाद) ठीक.....ठीक समय भगवान ने तुम्हें सुबुद्धि दी। सारा हाल सच-सच कह देने से अच्छा निर्णय हो ही नहीं सकता था। परलोक बचा, क्योंकि किसी और के साथ खाने से जो धर्म जाता वह धर्म बच गया। इहलोक बचा क्योंकि राज्यभय नहीं रह जाएगा..... इतना..... ही नहीं सम्भाजी को पाते ही, तुम्हारे जरिए पाते ही औरंगजेब कितना.....कितना खुश होगा तुम पर।.....कदाचित्.....कदाचित् तुम मनसबदार हो जाओ, तुम न भी हुए.....अर्थात् तुमने यदि मनसबदारी अस्वीकृत भी कर दी तो.....तो मनसबदार हो सकता है हमारा लड़का। अरे ! उन लड़कियों का सम्बन्ध तब अच्छे से अच्छे स्थान पर हो सकेगा।.....कितना.....कितना परिश्रम तुम कर चुके हो इन लड़कियों के लिए योग्य वर ढूँढने का ! बादशाह.....हाँ बादशाह की कृपा के पश्चात् कौन.....कौन वस्तु दुर्लभ रह जाएगी? (कुछ रुककर) और.....और यह सब होगा किस कारण.....उसी.....उसी सत्य की शरण के कारण, जिसका जीवन हाँ, जीवन भर तुमने आश्रय रखा है। (नेपथ्य में 'पण्डित जी पण्डित जी'! शब्द होता है।)

अहिल्या : (जल्दी से) लो.....लो, कदाचित् दिलावर खाँ आ गया। अब.....अब.....सब बातचीत स्पष्ट रूप से कर लो उससे..... (शीघ्रता से प्रस्थान)

पुरुषोत्तम : (जिसके मुख का रंग ही दिलावर खाँ की आवाज सुनकर और ही हो गया है, गला साफ करते हुए खिड़की के पास जा, मुख बाहर निकाल नीचे देखते हुए) अहा हा ? दिलावर खाँ साहब! आइए, आ जाइए।

(दिलावर खाँ और रहमानबेग का प्रवेश)

पुरुषोत्तम : आइए, आइए मैं पूजा से उठ आप ही लोगों का रास्ता देख रहा था। बैठिए, बैठिए।

दिलावर खाँ : (बिछायत पर बैठते हुए) आप भी तो बैठिए पण्डित जी।

(दिलावर खाँ और रहमानबेग बिछायत पर बैठ जाते हैं।)

पुरुषोत्तम : पूजा के पश्चात् भोजन तक मैं किसी वस्त्र आदि का स्पर्श नहीं करता। पहले आपको झंझट से मुक्त कर दूँ।

दिलावर खाँ : (कुछ सहमते हुए) आपके मुआफिक मुआजिज शख्स के लिए जो सबूत मैंने माँगा उसकी कोई जरूरत तो नहीं है, आपकी बात ही सबूत होनी चाहिए, लेकिन.....लेकिन.....आप जानते हैं कि ये सारे सियासी मामलात.....

पुरुषोत्तम : नहीं-नहीं आप कोई संकोच न कीजिए। अपने कर्तव्य का पालन करना धर्म ही है। मैं.....मैं भी आपको पूर्ण रूप से संतुष्ट कर दूँगा। (जिस दरवाजे से अहिल्या गई है, उसी से जाता है।)

रहमानबेग : जनाब अब, भी शक की कोई गुंजाइश बाकी है ?

दिलावर खाँ : वह खाए तो उस लड़के के साथ पहले मेरे सामने।

रहमानबेग : पर खाने के बाद।

दिलावर खाँ : हाँ खाने के बाद तो शक की कोई गुजांइश नहीं रहनी चाहिए।

(दिलावर खाँ और रहमानबेग उत्कण्ठा से जिस दरवाजे से पुरुषोत्तम गया उस दरवाजे की ओर देखते हैं। पुरुषोत्तम के एक हाथ में परसी हुई थाली और दूसरे हाथ में जल का कलश लिए हुए प्रवेश। थाली में भात, दाल, शाक इत्यादि परसे हुए हैं। पुरुषोत्तम की सारी उद्विग्नता नष्ट हो गयी, उसका मुख प्रसन्नता से चमक रहा है। उसके पीछे-पीछे सम्भाजी आता है। पुरुषोत्तम बिना बिछायत की भूमि पर थाली रखता है, उसी के निकट जल का कलश। थाली के दोनों और पुरुषोत्तम और सम्भाजी बैठ जाते हैं। पुरुषोत्तम भोजन का थोड़ा अंश निकाल जमीन पर रखकर थाली के चारों और जल छिड़कता है।)

पुरुषोत्तम : (जल छिड़कते हुए) 'सत्यन्तवर्तेन परिषिञ्चामि' (अब आचमन करते हुए) 'अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा'

(अब पुरुषोत्तम और सम्भाजी दोनों उसी थाली में से खाना आरम्भ करते हैं।)

पुरुषोत्तम : (खाते-खाते) कहिए, खाँ साहब अब..... अब भी आपको विश्वास हुआ या नहीं कि विनायक मेरा भांजा है ?

(दिलावर खाँ का मुख शर्म से झुक जाता है। रहमानबेग कभी दिलावर खाँ की तरफ देखता है कभी पुरुषोत्तम की ओर)

[परदा गिरता है]

अभ्यास

बोध प्रश्न -

अति लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. पुरुषोत्तम कौन है ?
2. शिवाजी के पुत्र का क्या नाम था ?
3. शास्त्रों में किसकी व्याख्या बड़ी बारीकी से की गई है ?
4. पुरुषोत्तम किस कार्य को दुष्कर्म की संज्ञा देते हैं ?
5. सत्य का आश्रय छोड़ने का क्या दुष्परिणाम होता है ?

लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. सत्य स्वयं ही सारे प्रश्नों का निराकरण कब करता है ?
2. असत्य किन परिस्थितियों में सत्य से बड़ा हो जाता है ?
3. पुरुषोत्तम अपने किन गुणों के कारण सबके सम्मान पात्र थे ?
4. सम्भाजी पुरुषोत्तम के आश्रय में कैसे पहुँचे ?
5. पुरुषोत्तम की दृष्टि में सबसे बड़ा पातक क्या है ?
6. पुरुषोत्तम ने अहिल्या से सत्य और असत्य की क्या व्याख्या की ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

1. पुरुषोत्तम के चरित्र की क्या विशेषताएँ थीं ?
2. पुरुषोत्तम के समक्ष कौन सा धर्मसंकट उपस्थित हुआ ?
3. ''दिन भर का भूला-भटका यदि रात को भी घर लौट आए तो वह भूला नहीं कहलाता'' इस कथन का भाव-विस्तार कीजिए।
4. 'सच्चा धर्म' एकांकी का केन्द्रीय-भाव समझाइए।
5. एकांकी के तत्वों का नाम लिखकर 'सच्चा धर्म' के संवादों पर टिप्पणी कीजिए।

भाषा अध्ययन -

1. निम्नलिखित शब्दों का वाक्यों में प्रयोग कीजिए -
   सत्यवादी, बलिदान, दुष्कर्म, निस्तब्धता
2. निम्नलिखित शब्दों का संधि विच्छेद करके सन्धि का नाम लिखिए -
   शरणागत, पुरुषोत्तम, यज्ञोपवीत
3. 'क' स्तंभ में दिए गए शब्दों का 'ख' स्तंभ में दिए गए शब्दों से सही सम्बन्ध स्थापित कीजिए।

	'क'	'ख'
1.	जिसका ज्ञान कम हो	अशक्त
2.	जिसमें शक्ति न हो	अल्पज्ञ
3.	जिसे क्षमा न किया जा सके	अनुयायी
4.	अनुसरण करने वाला	पुरुषोत्तम
5.	जिसके समान कोई दूसरा न हो	अक्षम्य
6.	जो पुरुषों में उत्तम है	अद्वितीय